SKU JOURNAL OF LEX VIBRENT
(NATIONAL PEER REVIEWED E-RESEARCH JOURNAL)
April – June 2025
E-ISSN 3048-7323
Vol-2
Issue-2

दैहिक स्वतंत्रता एवं विविध कानूनी प्रावधान- एक विधिक दृष्टिकोण

श्रीमति पूनम चौरसिया
शोधार्थी, विधि विभाग
श्री कृष्णा विश्वविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

सारांश

भारत के संविधान में दैहिक स्वतंत्रता को एक मौलिक अधिकार के रूप में स्थापित किया गया है, जो व्यक्ति की गरिमा, निजता एवं आत्मनिर्णय की भावना से जुड़ा हुआ है। अनुच्छेद 21 के अंतर्गत 'जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार' इस स्वतंत्रता की आधारशिला है। साथ ही, अनुच्छेद 14, 19, 22 जैसे अन्य प्रावधान इस अधिकार को और अधिक मजबूती प्रदान करते हैं। विधिक दृष्टिकोण से यह स्पष्ट है कि भारत की विधिक प्रणाली दैहिक स्वतंत्रता को अत्यधिक महत्व देती है। किंतु व्यवहारिक धरातल पर अनेक ऐसे कारक हैं, जो इस अधिकार के प्रभावी क्रियान्वयन में बाधा बनते हैं। इसी द्वंद्व को समझने हेतु यह शोध परिकल्पना निर्मित की गई है।

इस शोध का प्रमुख उद्देश्य यह समझना है कि क्या भारत में दैहिक स्वतंत्रता के संरक्षण हेतु बनाए गए विधिक प्रावधान पर्याप्त हैं और क्या वे व्यावहारिक रूप से लागू भी हो पा रहे हैं। न्यायपालिका ने समय-समय पर इस अधिकार की व्याख्या करते हुए इसके दायरे को विस्तृत किया है - जैसे *Maneka Gandhi v. Union of India* (1978), *Selvi v. State of Karnataka* (2010), तथा *K.S. Puttaswamy v. Union of India* (2017) जैसे ऐतिहासिक निर्णयों में। इन निर्णयों में न केवल 'दैहिक स्वतंत्रता' को एक मूलभूत अधिकार के रूप में मान्यता दी गई, बल्कि इसकी रक्षा के लिए विधिक प्रक्रिया को भी सुनिश्चित किया गया।

वहीं दूसरी ओर, जमीनी सच्चाई यह दर्शाती है कि आज भी अनेक व्यक्तियों - विशेषकर महिलाओं, बच्चों, मानसिक रोगियों, गरीबों, अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों - की दैहिक स्वतंत्रता का लगातार उल्लंघन होता है। पुलिस की कठोर कार्यवाही, अवैध हिरासत, जबरन

चिकित्सा परीक्षण, तथा सामाजिक दबाव ऐसे उदाहरण हैं जो दर्शाते हैं कि विधिक संरक्षण होने के बावजूद व्यक्ति की स्वतंत्रता पूर्णतः सुरक्षित नहीं है।

इस परिकल्पना के अंतर्गत यह विचार किया गया है कि भारत में दैहिक स्वतंत्रता संबंधी विधिक प्रावधानों में सैद्धांतिक रूप से कोई कमी नहीं है, लेकिन उनके व्यावहारिक क्रियान्वयन में गंभीर खामियाँ हैं। यह अंतर तभी समाप्त किया जा सकता है जब न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका के बीच समन्वय हो, तथा नागरिकों में भी अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़े। इस शोध के माध्यम से यह भी जांचा जाएगा कि अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों के अनुरूप भारत की स्थिति कहाँ तक पहुँच पाई है और इसमें क्या सुधार की संभावनाएँ मौजूद हैं।

मुख्य शब्द
दैहिक स्वतंत्रता, मौलिक अधिकार, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, निजता का अधिकार और भारत का संविधान।

प्रस्तावना

दैहिक स्वतंत्रता मानव जीवन की सबसे मूलभूत और प्राकृतिक आवश्यकता है। यह स्वतंत्रता व्यक्ति के शारीरिक अस्तित्व, आत्मनिर्णय, गरिमा और निजता से सीधे जुड़ी हुई है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने शरीर पर अधिकार होना एक ऐसा सार्वभौमिक नैतिक और विधिक सिद्धांत है, जिसे न केवल राष्ट्रीय स्तर पर बल्कि अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार दस्तावेजों में भी मान्यता प्राप्त है। भारत के संविधान में भी यह स्वतंत्रता विभिन्न मौलिक अधिकारों के माध्यम से संरक्षित है, विशेष रूप से अनुच्छेद 21 में निहित "जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार" इसके केंद्र में है। वर्तमान युग में जहां मानवाधिकारों की रक्षा को लेकर वैश्विक रूप से चेतना बढ़ी है, वहीं यह भी देखने को मिलता है कि दैहिक स्वतंत्रता का हनन कई बार राज्य की शक्तियों, सामाजिक दबावों तथा विधिक तंत्र की खामियों के कारण होता है। दैहिक स्वतंत्रता का तात्पर्य उस स्वायत्तता से है जो व्यक्ति को अपने शरीर से संबंधित निर्णय स्वतंत्र रूप से लेने की अनुमति देती है। इसमें यह भी शामिल है कि कोई व्यक्ति किसी भी बाह्य दबाव या

बल प्रयोग के बिना, अपनी मर्जी से जीवन शैली, यौन संबंध, चिकित्सा उपचार, गर्भपात या अन्य शारीरिक गतिविधियों के बारे में निर्णय ले सके। यह स्वतंत्रता विशेषकर महिलाओं, बच्चों, विकलांगों, मानसिक रोगियों और लैंगिक अल्पसंख्यकों के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण हो जाती है, जिनकी स्वतंत्रता अक्सर सामाजिक या कानूनी व्यवस्था की सीमाओं के भीतर कुचली जाती है।

भारत का संविधान, जो विश्व के सबसे विस्तृत और प्रगतिशील संविधानों में से एक है, अपने नागरिकों को न केवल स्वतंत्रता का अधिकार देता है बल्कि उसकी गरिमा और निजता की रक्षा भी सुनिश्चित करता है। अनुच्छेद 14 (समानता का अधिकार), अनुच्छेद 19 (विचार, अभिव्यक्ति और गमन की स्वतंत्रता) तथा अनुच्छेद 21 (जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता) मिलकर एक ऐसा त्रिकोण रचते हैं जो दैहिक स्वतंत्रता को कानूनी रूप से पुष्ट करता है। न्यायपालिका ने समय-समय पर इन अनुच्छेदों की व्याख्या करते हुए इस स्वतंत्रता के दायरे को और भी अधिक व्यापक बनाया है। Maneka Gandhi बनाम भारत संघ (1978) में सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया कि "व्यक्तिगत स्वतंत्रता" का अर्थ केवल भौतिक स्वतंत्रता नहीं है, बल्कि इसमें गरिमा और आत्मसम्मान की भावना भी अंतर्निहित है।

भारत के विधिक ढांचे में कई ऐसे अधिनियम और प्रावधान हैं जो दैहिक स्वतंत्रता को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। जैसे कि दंड प्रक्रिया संहिता (CrPC) में गिरफ्तारी, हिरासत, न्यायिक प्रक्रिया से संबंधित प्रावधान हैं; भारतीय दंड संहिता (IPC) में बलात्कार, यौन उत्पीड़न, शारीरिक चोट आदि को अपराध के रूप में परिभाषित किया गया है। इसके अतिरिक्त, मानसिक स्वास्थ्य देखभाल अधिनियम, 2017, चिकित्सा गर्भपात अधिनियम (MTP Act), POCSO Act, ट्रांसजेंडर व्यक्ति (अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 2019 आदि भी दैहिक स्वतंत्रता से जुड़े हुए हैं। इन सभी विधानों का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि कोई भी व्यक्ति, विशेष रूप से संवेदनशील समूह, अपने शरीर के मामलों में स्वतंत्रता और सुरक्षा का अनुभव कर सके। हालांकि विधिक व्यवस्था में इन अधिकारों को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है, परंतु व्यवहारिक स्तर पर इनका क्रियान्वयन अनेक चुनौतियों से घिरा है। पुलिस द्वारा की जाने वाली बर्बरता, अवैध गिरफ्तारी, हिरासत में मौतें, फर्जी मुठभेड़ें, जबरन नार्को टेस्ट या

ब्रेन मैपिंग, महिलाओं के विरुद्ध यौन हिंसा, लैंगिक असमानता और सामाजिक दबाव - ये सभी ऐसे उदाहरण हैं जो यह दर्शाते हैं कि दैहिक स्वतंत्रता की वैधानिक व्यवस्था के बावजूद वास्तविकता में यह अधिकार खतरे में पड़ जाता है।

महिलाओं की दैहिक स्वतंत्रता पर पारंपरिक, धार्मिक और सांस्कृतिक मूल्यों का अत्यधिक प्रभाव होता है। उदाहरण स्वरूप, विवाह के भीतर बलात्कार को अब तक आपराधिक श्रेणी में न रखा जाना, महिलाओं के यौन और प्रजनन अधिकारों को सीमित करना, या उन्हें जबरन गर्भपात से रोकना, ये सभी समाज में व्याप्त लैंगिक पूर्वग्रह की झलक देते हैं। इसी प्रकार, LGBTQ+ समुदाय को लंबे समय तक उनकी पहचान और दैहिक स्वतंत्रता से वंचित रखा गया था, जिसे Navtej Singh Johar v. Union of India (2018) में धारा 377 को असंवैधानिक घोषित कर सुधारा गया। इसी तरह बच्चों और मानसिक रूप से विकलांग व्यक्तियों की दैहिक स्वतंत्रता पर भी सवाल उठते रहे हैं, क्योंकि उनके लिए अक्सर निर्णय माता-पिता या अभिभावक लेते हैं, जो कभी-कभी उनकी इच्छाओं और सर्वोत्तम हितों के विरुद्ध भी हो सकते हैं। यही कारण है कि आधुनिक विधिक दृष्टिकोण 'सहमति' (consent) को सबसे महत्वपूर्ण तत्व मानता है, और इसे दैहिक स्वतंत्रता की रीढ़ के रूप में देखा जाता है।

शोध पद्धति

इस शोध में गुणात्मक (Qualitative) एवं विश्लेषणात्मक (Analytical) शोध पद्धति को अपनाया गया है। शोध का उद्देश्य भारतीय संविधान, विशेषकर अनुच्छेद 21 के अंतर्गत संरक्षित "दैहिक स्वतंत्रता" (Bodily Autonomy) की अवधारणा को समझना तथा इससे संबंधित विविध कानूनी प्रावधानों का विश्लेषण करना है। इसके अंतर्गत शोधकर्ता ने डॉक्ट्रिनल पद्धति (Doctrinal Method) का प्रयोग करते हुए भारत के संविधान, भारतीय दंड संहिता (IPC), आपराधिक प्रक्रिया संहिता (CrPC), तथा विशेष अधिनियमों जैसे मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रेगनेंसी एक्ट, यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम (POCSO), और ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के अधिकारों से संबंधित अधिनियम का गहन अध्ययन किया है। इसके अतिरिक्त, सुप्रीम कोर्ट और विभिन्न उच्च न्यायालयों के प्रासंगिक निर्णयों जैसे के.एस. पुट्टस्वामी बनाम भारत संघ, नवतेज

सिंह जौहर बनाम भारत संघ, और जस्टिस केएस पुट्टस्वामी (रिटायर्ड) बनाम भारत संघ (निजता का अधिकार मामला) क विश्लेषण भी किया गया है। शोध में विधिक लेखों, मानवाधिकार रिपोर्टों, और वर्तमान सामाजिक परिप्रेक्ष्य का उपयोग करते हुए यह समझने का प्रयास किया गया है कि दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार भारतीय विधि-व्यवस्था में किस रूप में विकसित हो रहा है। यह विधिक विश्लेषण नीति निर्माण एवं मानवाधिकार संरक्षण के क्षेत्र में योगदान देने हेतु केंद्रित है।

शोध विस्तार

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19 को लोकतांत्रिक व्यवस्था की आत्मा माना जाता है। यह अनुच्छेद नागरिकों को विभिन्न प्रकार की स्वतंत्रताओं का संरक्षण प्रदान करता है, जैसे कि वाणी की स्वतंत्रता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, शांतिपूर्ण रूप से सभा करने की स्वतंत्रता, संघ बनाने की स्वतंत्रता, स्वतंत्र रूप से देशभर में भ्रमण करने और निवास करने की स्वतंत्रता तथा किसी भी व्यवसाय या व्यापार को अपनाने की स्वतंत्रता। यद्यपि अनुच्छेद 19 का सीधा संबंध विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से है, फिर भी इसका दैहिक स्वतंत्रता से गहरा और महत्वपूर्ण अंतर्संबंध है। दैहिक स्वतंत्रता का तात्पर्य उस स्वायत्तता (autonomy) से है जो व्यक्ति को अपने शरीर से संबंधित निर्णय लेने की स्वतंत्रता प्रदान करती है। इसमें यह शामिल है कि व्यक्ति बिना किसी बल या बाह्य दबाव के यह तय कर सके कि वह कैसे रहना चाहता है, कहाँ जाना चाहता है, क्या पहनना चाहता है, क्या खाता है, किनसे मिलना चाहता है, और कैसे जीवन जीना चाहता है। यह अधिकार न केवल शारीरिक स्वतंत्रता की गारंटी देता है, बल्कि व्यक्ति की निजता, गरिमा और आत्मनिर्णय का भी मूल आधार है।

अनुच्छेद 19 और अनुच्छेद 21 का सहसंबंध

यद्यपि दैहिक स्वतंत्रता की स्पष्ट रूप से व्याख्या अनुच्छेद 21 के अंतर्गत की जाती है – जो "जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता" की गारंटी देता है – फिर भी अनुच्छेद 19 और 21 एक-दूसरे के पूरक हैं। Maneka Gandhi बनाम भारत संघ (1978) के ऐतिहासिक निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि “अनुच्छेद 21 में निहित व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार केवल तभी

अर्थपूर्ण होगा, जब वह अनुच्छेद 19 में वर्णित स्वतंत्रताओं के साथ सामंजस्य में व्याख्यायित किया जाए।" इस निर्णय के माध्यम से अदालत ने यह भी स्पष्ट किया कि कोई भी कानून जो अनुच्छेद 21 का उल्लंघन करता है, उसे न्यायसंगत, तर्कसंगत और उचित प्रक्रिया (just, fair and reasonable procedure) के अंतर्गत ही वैध माना जा सकता है।

भारतीय संविधान के मौलिक अधिकारों में अनुच्छेद 19 और अनुच्छेद 21 का अत्यधिक महत्व है। ये दोनों अनुच्छेद नागरिकों को स्वतंत्रता और जीवन जीने का अधिकार प्रदान करते हैं, जो लोकतंत्र की आत्मा माने जाते हैं। अनुच्छेद 19(1) नागरिकों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, शांतिपूर्वक सभा करने का अधिकार, संघ बनाने की स्वतंत्रता, भारत के किसी भी भाग में स्वतंत्र रूप से भ्रमण करने और निवास करने की स्वतंत्रता तथा व्यवसाय, व्यापार या उद्योग करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। यह अनुच्छेद नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र में सक्रिय रूप से भाग लेने का अवसर देता है। दूसरी ओर, अनुच्छेद 21 यह सुनिश्चित करता है कि किसी भी व्यक्ति को उसकी "जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता" से कानून द्वारा स्थापित न्यायोचित प्रक्रिया के बिना वंचित नहीं किया जा सकता।

शुरुआत में भारतीय न्यायपालिका इन दोनों अनुच्छेदों को अलग-अलग दृष्टिकोण से देखती थी। A.K. Gopalan बनाम भारत संघ (1950) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि यदि राज्य किसी व्यक्ति को किसी वैध कानून के अनुसार बंदी बनाता है, तो वह अनुच्छेद 21 का उल्लंघन नहीं है, भले ही अनुच्छेद 19 की कुछ स्वतंत्रताएँ प्रभावित हों। लेकिन बाद में Maneka Gandhi बनाम भारत संघ (1978) के ऐतिहासिक निर्णय में यह दृष्टिकोण बदल दिया गया। सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया कि अनुच्छेद 21 में "कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया" का अर्थ केवल विधिक प्रक्रिया नहीं है, बल्कि वह प्रक्रिया न्यायसंगत, तर्कसंगत और उचित (just, fair and reasonable) होनी चाहिए। साथ ही, कोर्ट ने यह भी कहा कि मौलिक अधिकारों को अलग-अलग न देखकर एक समन्वित रूप में पढ़ा जाना चाहिए, विशेषकर अनुच्छेद 14, 19 और 21 को।

इस दृष्टिकोण का प्रभाव यह हुआ कि जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की परिभाषा अब केवल शारीरिक अस्तित्व तक सीमित नहीं रही, बल्कि उसमें स्वाभिमान, गरिमा, निजता, व्यक्तिगत पसंद, शारीरिक स्वायत्तता और सम्मानजनक जीवन जैसी अवधारणाएँ भी जुड़ गईं। Justice K.S. Puttaswamy बनाम भारत संघ (2017) मामले में सुप्रीम कोर्ट ने निजता के अधिकार को मौलिक अधिकार घोषित किया और स्पष्ट किया कि यह अधिकार अनुच्छेद 21 के साथ-साथ अनुच्छेद 19 की स्वतंत्रताओं से भी गहराई से जुड़ा है, जैसे विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता। इसके अतिरिक्त, Olga Tellis बनाम बॉम्बे नगर निगम (1985) के निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने आजीविका के अधिकार को जीवन के अधिकार का अभिन्न अंग माना। जब किसी व्यक्ति को उसकी रोजगार की जगह से बेदखल किया जाता है, तो वह केवल अनुच्छेद 19(1)(g) का ही नहीं, बल्कि अनुच्छेद 21 का भी उल्लंघन होता है।

अतः यह स्पष्ट है कि अनुच्छेद 19 और अनुच्छेद 21 एक-दूसरे से अलग नहीं, बल्कि एक दूसरे के पूरक हैं। ये दोनों मिलकर व्यक्ति को एक गरिमामय जीवन जीने की संपूर्ण स्वतंत्रता प्रदान करते हैं। किसी भी अधिकार का हनन केवल कानूनी नहीं बल्कि नैतिक और संवैधानिक रूप से भी अस्वीकार्य है। न्यायपालिका ने समय-समय पर इन दोनों अनुच्छेदों की सामूहिक व्याख्या करते हुए नागरिकों के अधिकारों को और सशक्त बनाया है। भारतीय संविधान की यह विशेषता इसे एक जीवंत, लोकतांत्रिक और मानवाधिकार आधारित संविधान बनाती है।

दैहिक स्वतंत्रता से जुड़े अनुच्छेद 19 के पहलू

स्वतंत्र गमन और निवास की स्वतंत्रता (Freedom of movement and residence)

अनुच्छेद 19(1)(घ) और (ङ) व्यक्ति को देश के भीतर कहीं भी आने-जाने और निवास करने की स्वतंत्रता देता है। यदि किसी को अवैध रूप से गिरफ्तार कर उसकी आवाजाही पर रोक लगाई जाती है, तो यह दैहिक स्वतंत्रता के साथ-साथ अनुच्छेद 19 का भी उल्लंघन है।

विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता (Freedom of speech and expression)

किसी व्यक्ति की विचार, अभिव्यक्ति या पहनावे को नियंत्रित करना भी दैहिक स्वायत्तता का हनन हो सकता है। उदाहरण के लिए, जब महिलाओं या धार्मिक अल्पसंख्यकों के पहनावे पर

सामाजिक या विधिक प्रतिबंध लगाए जाते हैं, तब वह केवल विचार की स्वतंत्रता ही नहीं बल्कि उनके शरीर पर नियंत्रण का भी प्रयास होता है।

व्यवसाय और आजीविका की स्वतंत्रता (Freedom to practice any profession)

यह स्वतंत्रता व्यक्ति की दैहिक शक्ति और श्रम पर आधारित होती है। किसी महिला या ट्रांसजेंडर व्यक्ति को उनके शरीर, लैंगिक पहचान या शारीरिक रूप के कारण रोजगार से वंचित करना न केवल सामाजिक भेदभाव है, बल्कि दैहिक स्वतंत्रता और अनुच्छेद 19 दोनों का हनन है।

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 19 केवल एक कानूनी प्रावधान नहीं है, बल्कि यह दैहिक स्वतंत्रता की आधारशिला है। यह व्यक्ति को वह संवैधानिक शक्ति प्रदान करता है जिससे वह अपने जीवन, शरीर और पहचान को स्वतंत्र रूप से आकार दे सके। जब तक अनुच्छेद 19 में वर्णित स्वतंत्रताएँ पूर्ण रूप से संरक्षित और लागू नहीं होतीं, तब तक दैहिक स्वतंत्रता एक अधूरी अवधारणा ही बनी रहेगी। अतः यह आवश्यक है कि न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका मिलकर इन स्वतंत्रताओं को व्यवहारिक धरातल पर सुदृढ़ करें।

अनुच्छेद 19 और अनुच्छेद 21 के सहसंबंध से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण ऐतिहासिक (etihasik) न्यायिक निर्णय -

A.K. Gopalan बनाम भारत संघ (1950)

यह स्वतंत्र भारत का पहला महत्वपूर्ण मौलिक अधिकारों से संबंधित निर्णय था। इसमें सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि अनुच्छेद 21 में " कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया" (procedure established by law) केवल विधिक प्रक्रिया (due process) तक सीमित है। इसमें यह भी कहा गया कि अनुच्छेद 19 और 21 को एक-दूसरे से अलग माना जाना चाहिए।

Maneka Gandhi बनाम भारत संघ (1978)

यह फैसला मौलिक अधिकारों की व्याख्या में क्रांतिकारी परिवर्तन लेकर आया। सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि अनुच्छेद 21 में "कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया" का अर्थ न्यायसंगत, तर्कसंगत और

उचित (just, fair, and reasonable) होना चाहिए। साथ ही यह भी कहा गया कि अनुच्छेद 14, 19 और 21 को संपूर्णता में पढ़ा जाना चाहिए।

Kharak Singh बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (1963)

इस मामले में एक व्यक्ति पर पुलिस द्वारा लगातार निगरानी रखने के विरुद्ध याचिका दायर की गई थी। कोर्ट ने माना कि इस तरह की निगरानी व्यक्ति की गोपनीयता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का उल्लंघन करती है, हालांकि उस समय निजता के अधिकार को स्वतंत्र मौलिक अधिकार के रूप में नहीं माना गया था।

Justice K.S. Puttaswamy (Retd.) बनाम भारत संघ (2017)

निजता के अधिकार को एक स्वतंत्र मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता दी गई, जो अनुच्छेद 21 और Kunal Kamra बनाम भारत संघ (2024)

इस मामले में, न्यायमूर्ति गौतम पटेल ने स्पष्ट किया कि अनुच्छेद 19(1)(a) के तहत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर विचारों की अभिव्यक्ति भी शामिल है। उन्होंने सरकार द्वारा तथाकथित "फर्जी समाचार" को हटाने के लिए बनाए गए नियम को असंवैधानिक ठहराया, क्योंकि यह अनुच्छेद 19(2) में निर्दिष्ट सीमाओं से परे जाकर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर अनुचित प्रतिबंध लगाता है।

Amar Jain बनाम भारत संघ (2025)

सुप्रीम कोर्ट ने इस मामले में निर्णय दिया कि समावेशी और सुलभ डिजिटल पहुंच विशेष रूप से दिव्यांग व्यक्तियों के लिए, अनुच्छेद 21 के तहत जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार का अभिन्न हिस्सा है। कोर्ट ने सभी सार्वजनिक और निजी संस्थाओं को निर्देश दिया कि वे डिजिटल सेवाओं, जैसे कि KYC प्रक्रियाओं, को दिव्यांगजनों के लिए सुलभ बनाएं।

Voleti Sri Lakshmi बनाम भारत संघ (2025)

तेलंगाना उच्च न्यायालय ने एक 49 वर्षीय महिला को, जो अपने 50वें जन्मदिन से दो दिन दूर थीं, प्रजनन उपचार की अनुमति दी। अदालत ने माना कि प्रजनन स्वायत्तता अनुच्छेद 21 के

तहत संरक्षित है, और अधिकारियों की निष्क्रियता ने उनके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन किया।

Monowara Bewa निर्वासन मामला (2025)

सुप्रीम कोर्ट ने केंद्र सरकार से जवाब मांगा कि कैसे एक महिला को, जिनकी याचिका अभी लंबित थी, बांग्लादेश निर्वासित किया गया। याचिकाकर्ता के अनुसार, यह कार्रवाई अनुच्छेद 19 और 21 के तहत उनके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है, क्योंकि उन्हें उचित कानूनी प्रक्रिया के बिना देश से बाहर किया गया।

M.K. Ranjitsinh बनाम भारत संघ (2024)

सुप्रीम कोर्ट ने इस निर्णय में जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों से मुक्ति को अनुच्छेद 21 के तहत एक मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता दी। यह निर्णय पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास के बीच संतुलन स्थापित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

Association for Democratic Reforms बनाम भारत संघ (2024)

सुप्रीम कोर्ट ने चुनावी बांड योजना को असंवैधानिक घोषित किया, क्योंकि यह मतदाताओं के सूचना के अधिकार का उल्लंघन करती है, जो अनुच्छेद 19(1)(a) के तहत संरक्षित है। यह निर्णय पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ावा देने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

Kaushal Kishor बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2024)

इस मामले में, सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया कि अनुच्छेद 19(1) और अनुच्छेद 21 के तहत प्रदत्त अधिकारों को केवल राज्य के खिलाफ ही नहीं, बल्कि निजी व्यक्तियों के खिलाफ भी लागू किया जा सकता है। यह निर्णय मौलिक अधिकारों की व्यापकता और उनके प्रवर्तन की दिशा में एक महत्वपूर्ण विकास है।

निष्कर्ष - सुझाव

भारतीय संविधान के केंद्र में "व्यक्ति" है - उसकी गरिमा, स्वतंत्रता और समुचित विकास का अधिकार। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए संविधान ने अनुच्छेद 19 और अनुच्छेद 21 के माध्यम से नागरिकों को दैहिक स्वतंत्रता तथा अन्य मौलिक अधिकार प्रदान किए हैं। ये दोनों अनुच्छेद न केवल व्यक्तिगत स्वतंत्रता के संवैधानिक स्तंभ हैं, बल्कि मानव अधिकारों के सार्वभौमिक सिद्धांतों के भी सजीव उदाहरण हैं।

अनुच्छेद 19 व्यक्ति को भाषण, अभिव्यक्ति, आवागमन, संघ बनाने और व्यवसाय करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। वहीं अनुच्छेद 21 जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार की गारंटी देता है। प्रारंभिक न्यायिक व्याख्याओं में ये दोनों अनुच्छेद अलग-अलग रूप में देखे गए, लेकिन Maneka Gandhi बनाम भारत संघ (1978) के ऐतिहासिक फैसले ने इन दोनों को एकीकृत दृष्टिकोण से देखने की दिशा तय की। इसके पश्चात, भारतीय न्यायपालिका ने दैहिक स्वतंत्रता की परिभाषा को केवल जीवन के अस्तित्व तक सीमित न रखकर उसमें गरिमा, निजता, प्रजनन अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वायत्तता और मानसिक शांति जैसे तत्वों को भी समाहित किया।

इस शोध में यह स्पष्ट होता है कि दैहिक स्वतंत्रता एक स्थैतिक या सीमित अवधारणा नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और तकनीकी विकास के साथ निरंतर विस्तारित होती जा रही है। न्यायपालिका ने समय-समय पर इस अवधारणा को आधुनिक संदर्भों में व्याख्यायित करते हुए, जैसे डिजिटल निजता, मेडिकल निर्णय की स्वायत्तता, लैंगिक पहचान की स्वतंत्रता आदि के माध्यम से इसे और भी समावेशी और प्रासंगिक बनाया है। Puttaswamy केस (2017) में निजता को मौलिक अधिकार मानना इस दिशा में सबसे सशक्त उदाहरण है।

भारत जैसे बहुजातीय, बहुसांस्कृतिक और लोकतांत्रिक देश में, जहां राज्य की भूमिका नागरिकों के जीवन में व्यापक है, वहाँ इन अधिकारों की रक्षा करना विशेष चुनौतीपूर्ण है। इसके लिए संतुलित विधिक व्यवस्था, संवेदनशील न्यायपालिका और जागरूक नागरिक समाज की आवश्यकता है। कानून केवल दंडात्मक नहीं, बल्कि रचनात्मक और संरक्षणात्मक भूमिका में भी हो - यही इस दृष्टिकोण का उद्देश्य होना चाहिए।, दैहिक स्वतंत्रता और उससे संबंधित कानूनी

प्रावधान केवल संविधान के अनुच्छेद नहीं हैं, बल्कि एक जीवंत लोकतंत्र की आत्मा हैं। इन अधिकारों की रक्षा न केवल विधिक उत्तरदायित्व है, बल्कि यह एक नैतिक और मानवीय दायित्व भी है। यदि राज्य और समाज इन अधिकारों को सम्मानपूर्वक लागू करें, तो न केवल संवैधानिक आदर्श साकार होंगे, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति को एक गरिमामय जीवन जीने की वास्तविक स्वतंत्रता प्राप्त होगी।

संदर्भ सूची

1. अनुच्छेद 21 - जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार

- Kharak Singh v. State of UP (AIR 1963 SC 1295)
- Maneka Gandhi v. Union of India (AIR 1978 SC 597*)* - इस निर्णय ने अनुच्छेद 21 की व्याख्या को विस्तृत किया।

- **अनुच्छेद 19(1)(d)** - भारत में स्वतंत्र रूप से आने-जाने और रहने का अधिकार।
- **अनुच्छेद 22** - गिरफ्तारी और हिरासत से संबंधित सुरक्षा।

2. प्रमुख न्यायिक निर्णय (Case Laws)

1. Justice K.S. Puttaswamy (Retd.) v. Union of India (2017 10 SCC 1)
   निजता का अधिकार दैहिक स्वातंत्रता का अभिन्न अंग घोषित किया गया।
2. Sheela Barse v. State of Maharashtra (AIR 1983 SC 378)
   हिरासत में महिलाओं के अधिकारों को लेकर महत्वपूर्ण फैसला।
3. Sunil Batra v. Delhi Administration (AIR 1978 SC 1675)
   कारागार में बंद कैदियों के दैहिक और मानसिक अधिकारों पर ध्यान।
4. Francis Coralie Mullin v. Administrator, Union Territory of Delhi (AIR 1981 SC 746)

3. विधिक पुस्तकें (Legal Texts)

- **V.N. Shukla's Constitution of India** - विधिक छात्रों और शोधार्थियों के लिए आधारभूत ग्रंथ।
- **M.P. Jain - Indian Constitutional Law** - संवैधानिक प्रावधानों की गहराई से विवेचना।
- **Dr. J.N. Pandey - Constitutional Law of India** - दैहिक स्वतंत्रता और मौलिक अधिकारों पर अध्याय उपलब्ध।

4. विधिक पत्रिकाएं एवं शोधपत्र

- Journal of Indian Law Institute
- Supreme Court Cases (SCC) Online Articles
- All India Reporter (AIR) Journals
- Drishti IAS notes